मेलिंडा की किताब से झांकती नारीवादी

निकोलस क्रिस्टॉफ

© The New York Times 2019

मेलिंडा गेट्स ने संस्मरणों की अपनी किताब में बिल गेट्स से अपने रोमांस और माइक्रोसॉफ्ट के दफ्तर के माहौल के बारे में लिखा है। वह कहती हैं कि तब से लेकर आज तक अमेरिका के कार्यस्थलों का माहौल थोड़ा भी नहीं बदला है, और जो महिलाओं के प्रतिकूल है। इस किताब में मेलिंडा एक प्रखर नारीवादी के रूप में हमारे सामने हैं।

मेलिंडा गेट्स शुरू से ही स्वतंत्र विचारों वाली लड़की थी। वर्ष 1987 में, जब वह मेलिंडा फ्रेंच थीं और माइक्रोसॉफ्ट की एक युवा कर्मचारी थीं, तब बिल गेट्स ने ऑफिस के पार्किंग स्पेस में उनसे फ्लर्ट करते हुए दो सप्ताह बाद बाहर जाने का प्रस्ताव रखा था। मेलिंडा ने वह प्रस्ताव खारिज करते हुए कहा, मुझे तुम्हारा यह प्रस्ताव मंजूर नहीं। दो घंटे बाद बिल गेट्स ने टेलीफोन कर उनके सामने शाम को बाहर चलने का प्रस्ताव रखते हुए पूछा था, क्या तुम्हें यह मंजूर है? मेलिंडा इस पर मान गईं।

मेलिंडा की द *मोमेंट ऑफ लिफ्ट* नाम से संस्मरणों की एक किताब हाल ही में आई है, जिसमें उन्होंने बताया है कि किस तरह एक नारीवादी के रूप में उनका रूपांतरण हुआ और अमेरिका में कार्यस्थलों में बदलाव लाए जाने की जरूरत है। मेलिंडा की इस किताब के कुछ हिस्से पूरी तरह व्यक्तिगत हैं। पहले वह एक ऐसी रिलेशनशिप में थीं, जिसमें उनका शोषण होता था। माइक्रोसॉफ्ट के तनाव भरे प्रतिस्पर्धी वातावरण में हमेशा उन्हें बाहर निकाल दिए जाने की आशंका सताती थी। और उसके बाद उन्होंने बिल गेट्स के साथ बराबरी का रिश्ता बनाने में सफलता पाई। यह इसलिए भी संभव हो पाया, क्योंकि गणित के एक खेल में उन्होंने बिल को हरा दिया था।

दुनिया भर में गरीबी कम करने में बिल और मेलिंडा गेट्स के योगदान का मैं बहुत बड़ा प्रशंसक हूं। पूरी दुनिया में हर साल अगर हजारों गरीब बच्चे इस दुनिया में आ पा रहे हैं, तो उसके पीछे गेट्स दंपति के दान के साथ-साथ नवजातों को बचाने की उनकी मुहिम का बड़ा योगदान है। वे टैक्स कानून में बदलाव लाने की भी मुहिम चला रहे हैं, ताकि समाज में गैरबराबरी कम हो। पिछले कुछ वर्षों में बिल और मेलिंडा का मैंने कई बार इंटरव्यू लिया है। वैश्विक स्वास्थ्य के क्षेत्र में उनके योगदान पर चर्चा करते हुए मैंने कई बार जान-बूझकर उनके रिश्तों के बारे में सवाल किए, लेकिन उन दोनों ने ही उन सवालों को खूबसूरती के साथ टाल दिया।

अपनी किताब में मेलिंडा ने अपने वैवाहिक जीवन से जुड़े तनावों का जिक्र किया है, लेकिन यह भी लिखा है कि किस तरह अपनी नारीवादी सोच के जरिये वह उन तनावों से बाहर निकल आईं। कुछ पाठक व्यंग्य कर सकते हैं कि अरबपति के दुख पर

परेशान क्यों होना। लेकिन इस मुद्दे पर मैं अलग तरह से सोचता हूं। इसमें कोई शक नहीं कि दुनिया भर में औरतों की बदहाली की तुलना में मेलिंडा गेट्स की चुनौतियां कुछ भी नहीं हैं। इसी महीने बांग्लादेश में नुसरत नाम की एक किशोरी को जलाकर मार डाला गया, क्योंकि उसने घर में शिकायत कर दी थी कि उसके स्कूल के हेडमास्टर ने उसे गलत ढंग से छुआ था।

मेलिंडा को पहली चुनौती माइक्रोसॉफ्ट के कठोर और पुरुष वर्चस्व वाले माहौल में मिली। वह लिखती हैं, 'ऑफिस का माहौल इतना खराब था कि लोग छोटी-छोटी बात पर तर्क और झगड़ा करते थे।' वह माइक्रोसॉफ्ट छोड़ देने के बारे में विचार कर रही थीं। उसी दौरान मेलिंडा को एक और महिला कर्मचारी गाईमैन मिली। वह कहती थीं, कार्यस्थल पर महिलाओं का रोना अच्छा नहीं माना जाता, लेकिन मर्दों का चिल्लाना अच्छा माना जाता है। फिर उन महिलाओं ने मिलकर साथी पुरुष कर्मचारियों को समझाने का अभियान आरंभ किया। माइक्रोसॉफ्ट के दफ्तर में नरमी को कमजोरी माना जाता था, लेकिन तमाम महिलाएं होकर माहौल को बेहतर बनाने के काम में लगी थीं।

वर्ष 1987 में अमेरिका में कंप्यूटर साइंस ग्रेजुएट महिलाओं का आंकड़ा 35 प्रतिशत था। उसी समय मेलिंडा ने ड्यूक यूनिवर्सिटी से वह डिग्री हासिल की थी। हालांकि वह आंकड़ा गिरकर अब 19 फीसदी रह गया है। अमेरिका में वेंचर कैपिटल में महिला पार्टनर महज दो फीसदी हैं। अमेरिका के कार्यस्थल का माहौल महिलाओं, खासकर कामकाजी माताओं, के खिलाफ है। मेलिंडा लिखती हैं, 'हम अपनी बेटियों को ऐसी जगह काम करने भेजती हैं, जो हमारे पिताओं के जमाने की मानसिकता के अनुकूल है। इन्हें इस तरह बनाया गया है, जैसे पुरुष कर्मचारियों की पत्नियां घर में रहती हैं और दिन भर ऐसे काम करती रहती हैं, जिनका उन्हें पैसा नहीं मिलता।' वह आगे लिखती हैं, 'दुनिया भर में जहां भी महिलाओं के साथ गैरबराबरी का सुलूक होता है, हम उसकी आलोचना करते हैं। हमें उन जगहों की ओर भी नजर दौड़ानी चाहिए, जहां हम इस गैरबराबरी को महसूस करते हैं-यानी अपने कार्यस्थल में।'

शादी के बाद भी मेलिंडा को इस लैंगिक गैरबराबरी से छुटकारा नहीं मिला। कंपनी के फाउंडेशन डे के दिन बिल जो चिट्ठी जारी करते थे, मेलिंडा भी उसमें लिखना चाहती थीं, क्योंकि वह कंपनी में बराबर की भागीदार थीं। लेकिन बिल ऐसा नहीं चाहते थे। इस मुद्दे पर दोनों के बीच लड़ाई होती थी। आखिरकार 2014 में वह चिट्ठी संयुक्त रूप से लिखी गई, लेकिन उसका बड़ा हिस्सा बिल ने लिखा था। 2015 में जाकर वह एक संतुलित चिट्ठी बनी।

एक बार एक महिला ने मेलिंडा को कहा, 'जब मैंने सुबह-सुबह बिल को कार चलाते देखा, तो घर जाकर अपने पति से कहा, जब बिल गेट्स अपने बच्चों को स्कूल छोड़ने जाते हैं, तो तुम क्यों नहीं जा सकते?'

यादवेंद्र

विज्ञान चिंतक

धरती को संकट से बचाने जुटी एक लड़की

पिछले साल अगस्त के महीने में स्वीडन की पंद्रह वर्षीय लड़की ग्रेटा थुनबर्ग ने अपनी स्मृति में सबसे ज्यादा प्राकृतिक हादसों को झेलने वाले स्वीडन (व्यापक रूप में पूरे यूरोप) के बेहतर पर्यावरणीय भविष्य की मांग करते हुए स्कूल से निकल कर स्वीडिश संसद की सीढ़ियों पर बैठने का फैसला कर लिया- उसने हाथ में 'सुरक्षित जलवायु के लिए स्कूल से हड़ताल' की तख्ती ले रखी थी। पेरिस जलवायु सम्मलेन में यह तय किया गया कि इस शताब्दी के अंत तक वैश्विक तापमान को दो डिग्री से कम बढ़ने देने के लिए कार्बन और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन पर अंकुश लगाया जाएगा। 2018 में जारी आईपीसीसी (जलवायु परिवर्तन का वैज्ञानिक अध्ययन करने वाला बहुराष्ट्रीय संगठन) की एक रिपोर्ट का दावा है कि 2050 तक यदि तापमान वृद्धि को डेढ़ डिग्री सेल्सियस पर रोकना है, तो ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर पूरी तरह रोक लगानी पड़ेगी।

ऑटिज्म (आत्मकेंद्रित बना देने वाला एक मानसिक लक्षण) से ग्रसित ग्रेटा की दिलचस्पी छह साल पहले जलवायु का विज्ञान समझने में हुई और यथासंभव हर तरह की जानकारी उसने इकट्ठा करनी शुरू की -मांसाहार त्यागना, जब जरूरत हो तभी बत्ती जलाना, अनिवार्य जरूरत के अतिरिक्त कोई सामान न खरीदना, पानी के उपयोग में किफायत बरतना, सोलर बिजली का प्रयोग, ऑर्गेनिक खेती, हवाई यात्रा से परहेज जैसे अनेक उपाय उसने अपना लिए। शुरू-शुरू में उसके मां पिता और मित्रों परिचितों के साथ साथ स्कूल प्रबंधन ने उसे ऐसा करने से रोकने की कोशिश की पर वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित उसके दृढ संकल्प के सामने किसी की एक न चली। उसने निम्नलिखित संदेश पर्चे में छपवा कर लोगों को बांटा, जिससे अपने आंदोलन को वैचारिक आधार प्रदान कर सके : मैं यह विरोध प्रदर्शन इसलिए कर रही हूं, क्योंकि आप सयानों ने हमारे भविष्य को गटर में फेंक दिया है। मुझे यह अपना नैतिक दायित्व लगता है कि वह जरूर करूं, जो एक इंसान के तौर पर मैं कर सकती हूं। स्कूल की कक्षाओं से बाहर निकल कर ऐसे प्रदर्शन करने की आलोचना का जवाब देते हुए ग्रेटा कहती है : 'उस भविष्य के लिए क्या पढ़ाई करना जो हमसे छीना जा रहा है ... मैं बेहतरी के लिए एक स्टैंड ले रही हूं, जो चल रहा है उसको अवरुद्ध कर रही हूं।'

स्वीडन की पंद्रह वर्षीय लड़की ग्रेटा थुनबर्ग ने ग्लोबल वार्मिंग के खिलाफ अभियान छेड़ दिया है। इसी महीने *टाइम* पत्रिका ने उसे दुनिया के सौ सबसे प्रभावशाली लोगों की सूची में शामिल किया। उसे नोबल शांति पुरस्कार के लिए भी नामित किया जा चुका है।

देखते-देखते एक इकलौती लड़की द्वारा शुरू किया गया विरोध प्रदर्शन पूरी दुनिया में फैल गया - अनुमान है कि 15 मार्च 2019 को दुनिया भर के सवा सौ देशों के लगभग पंद्रह लाख किशोर ग्रेटा द्वारा शुरू किए पर्यावरण आंदोलन के समर्थन में सड़कों पर निकले।

ब्रिटेन की प्रधानमंत्री टेरिजा मे सरीखे राजनेताओं ने ग्रेटा द्वारा शुरू किए गए इस आंदोलन को बचकाना और तथ्यों से अनभिज्ञ भले बताया हो, पर दुनिया भर के हजारों वैज्ञानिकों ने लिखित वक्तव्य जारी कर उन मुद्दों का समर्थन किया है जो आंदोलन ने अपने विरोध प्रदर्शनों में उठाए हैं।

साइंस पत्रिका के 12 अप्रैल के अंक के अनुसार दुनिया के विभिन्न देशों के तीन हजार से ज्यादा वैज्ञानिकों ने युवाओं द्वारा उठाए गए मुद्दों के समर्थन में 'कन्सर्न्स ऑफ यंग प्रोटेस्टर्स आर जस्टिफाइड' शीर्षक से लिखित वक्तव्य पर हस्ताक्षर किए।' इस वक्तव्य में कहा गया, 'यदि मानवता तत्काल कदम बढ़ाकर निर्णायक ढंग से ग्लोबल वार्मिंग को काबू में नहीं करती, जीवों और वनस्पतियों का आसन्न महाविनाश नहीं रोकती, भोजन की आपूर्ति का कुदरती आधार नहीं बचाती और वर्तमान तथा भविष्य की पीढ़ियों की सलामती सुनिश्चित नहीं कर पाती, तो साफ-साफ यह मान लेना होगा कि हमने अपने सामाजिक, नैतिक और ज्ञानाधारित दायित्वों का निर्वहन नहीं किया। युवा प्रदर्शनकारियों की समाज को व्यवहार्य बनाने के वास्ते इन उपायों को लागू करने की मांग बिलकुल उचित और न्यायसंगत है। सख्त, बेबाक और अविलंब कदमों के उठाए बगैर उनका भविष्य गहरे संकट में पड़ जाएगा।'

इसी महीने *टाइम* पत्रिका ने ग्रेटा थुनबर्ग को दुनिया के सौ सबसे प्रभावशाली लोगों की सूची में शामिल किया। उसे नोबल शांति पुरस्कार के लिए नामित किया जा चुका है। वह संयुक्त राष्ट्र महासचिव, यूरोपीय संसद प्रमुख, विश्व बैंक प्रमुख, दावोस में वर्ल्ड इकॉनोमिक फोरम प्रमुख और पोप के साथ विचारों का आदान-प्रदान कर चुकी है। पोप ने उसे अपना काम आगे बढ़ाते रहने की सलाह दी। बर्लिन के बिशप ने ग्रेटा की तुलना यीशु मसीह के साथ की तो प्रमुख जर्मन टीवी एंकर ने चे ग्वेवारा का अभिनव अवतार बताया।

ग्रेटा अलग-अलग देशों में जाकर अलख जगाती है, भाषण देती है, पर ग्रीनहाउस गैसों का अत्यधिक उत्सर्जन करने वाली हवाई यात्रा बिलकुल नहीं करती। उसकी गायक मां ने बरसों पहले अपने करियर को दांव पर लगाते हुए हवाई यात्रा से तौबा कर ली थी। ग्रेटा का दुख यह भी है कि दुनिया बचाने के लिए जलवायु संबंधी जितनी भी नीतियां बनाईं जा रही हैं, वे 2050 के आगे नहीं देखतीं-'तब तक तो मैं अपना आधा जीवन भी नहीं जी पाऊंगी....?'

भड़काने वाला अभियान

घृणा फैलाने वाले भाषण प्रचार का हिस्सा बन गए हैं। अब भी चार चरणों के चुनाव बाकी हैं, जिनमें 19 दिनों तक प्रचार होगा। ऐसे हर गैरजिम्मेदाराना बयान से भारत में सभ्य लोकतांत्रिक विमर्श एक-एक कदम नीचे गिरता जाएगा।

जून, 2015 में अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव के एक उम्मीदवार ने कहा था, 'जब मैक्सिको अपने लोगों को यहां भेजता है, तो वह अपने सर्वश्रेष्ठ लोगों को नहीं भेजता है। वह ऐसे लोगों को भेज रहा है, जिनके पास ढेर सारी समस्याएं हैं। वे नशीले पदार्थ लेकर आते हैं। वे अपराध लेकर आते हैं। वे बलात्कारी हैं।' इससे लोग भड़क उठे, लेकिन 6,29,84,825 लोगों ने नवंबर, 2016 में उसके पक्ष में वोट डाला। जनवरी, 2017 में इस उम्मीदवार ने दुनिया के सबसे अमीर और शक्तिशाली देश के पैंतालीसवें राष्ट्रपति के रूप में शपथ ली। वह थे, डोनाल्ड ट्रंप।

मुझे अंदेशा है कि भारत में भी ऐसे कई उम्मीदवार हैं, जो डोनाल्ड ट्रंप जैसा करना चाहेंगे और अभी हो रहे लोकसभा चुनावों में विजयी होंगे। इस साल मार्च और अप्रैल में ऐसे बयानों की बाढ़ आ गई और 17 मई को प्रचार खत्म होने से पहले तक घृणा और चरमपंथ को नए स्तर तक ले जाने वाले अभी ऐसे और बयान आएंगे।

खुद को तैयार कर लें, ताकि ऐसी आवाजों को सुन सकें जिनमें जहर उगला जा रहा है और गालियां निकाली जा रही हैं। मैं इसकी शुरुआत वहां से कर रहा हूं जिसे थोड़ा उदार कहा जा सकता है : सांसद साक्षी महाराज बदजुबानी के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने अपने प्रचार अभियान की शुरुआत इन शब्दों से की, '2024 में कोई चुनाव नहीं होगा। मैं एक संन्यासी हूं और भविष्य को देख सकता हूं। यह देश का आखिरी चुनाव है।' लोकसभा चुनाव 2019 की यह 'मंगल' शुरुआत थी!

गालियां और उपहास

गालियां इस अभियान का पहला हथियार बन गईं। यहां कुछ उदाहरण देखिए :

■ 18 मार्च को केंद्रीय मंत्री महेश शर्मा ने कहा, 'पप्पू कहता है कि वह प्रधानमंत्री बनना चाहता है। फिर वहां मायावती, अखिलेश यादव, पप्पू और अब पप्पू की बहन पप्पी भी आ गई है।'

■ बलिया के भाजपा विधायक सुरेंद्र सिंह ने 24 मार्च को कहा, 'राहुल की मां (सोनिया गांधी) भी इटली में उसी पेशे में थीं और उनके पिता ने उन्हें अपना बना लिया। उन्हें (राहुल गांधी) अपने परिवार की परंपरा को आगे बढ़ाना चाहिए और सपना को अपना बना लेना चाहिए।'

पी चिदंबरम

पूर्व केंद्रीय मंत्री

■ बेहुदगी की अगली कड़ी : महेश शर्मा ने 20 मार्च को मायावती को निशाना बनाया और कहा,'मायावती जी रोज फेशियल करती हैं, अपने बाल रंगती हैं, ताकि जवान दिखें।'

धमकी

धमकी आम तौर पर इस्तेमाल किया जाने वाला हथियार है :

■ इटावा से भाजपा उम्मीदवार राम शंकर कठेरिया ने 23 मार्च को कहा, 'हम केंद्र और राज्य में सरकार में हैं। हमें किसी ने उंगली दिखाई तो उसे तोड़ देंगे।'

■ मेनका गांधी ने जो कहा वह धमकी से कम नहीं था। 12 अप्रैल को मुस्लिमों की एक सभा में उन्होंने कहा, 'मैं लोकसभा का चुनाव जीत रही हूं, लेकिन मैं मुसलमानों के समर्थन के बिना जीतूंगी तो मुझे अच्छा नहीं लगेगा, क्योंकि इससे दिल खट्टा हो जाता है। फिर कोई मुसलमान आता है काम के लिए तो, मैं सोचती हूं कि रहने दो क्या फर्क पड़ता है? ...मैं मुस्लिमों के समर्थन या उसके बिना भी जीतूंगी।'

■ भाजपा नेता रंजीत बहादुर श्रीवास्तव को यह कहने (19 अप्रैल को) में जरा भी पछतावा नहीं हुआ : 'पिछले पांच साल में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मुस्लिमों का मनोबल तोड़ने का प्रयास किया है। यदि आप मुस्लिमों की नस्लों की बर्बादी चाहते हो, तो प्रधानमंत्री मोदी को वोट दो।'

दूसरी तरह की धमकियां भी दी गई हैं। कुछ उदाहरण देखिए :

■ 'विपक्ष सवाल उठा रहा है कि सर्जिकल स्ट्राइक कब हुई और किसने की। ऐसे में राहुल गांधी के शरीर में बम बांधकर उन्हें दूसरे देश भेजना चाहिए था। तब इनको समझ में आ जाता।' — पंकजा मुंडे, महाराष्ट्र की मंत्री, 12 अप्रैल।

■ ठीक इसी दिन प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने गैरजिम्मेदाराना बयान दिया। रणनीतिक परमाणु हथियारों के बारे में पाकिस्तान के कथित अहंकार का उल्लेख करते हुए, मोदी ने कहा, 'तब हमारे पास क्या है? क्या हमने दिवाली के लिए अपना परमाणु बम रखा है?'

उनसे पहले किसी भारतीय प्रधानमंत्री ने और दुनिया के किसी और नेता (उत्तर कोरिया के किम को छोड़कर) ने 1945 के बाद से कभी भी परमाणु हथियारों के इस्तेमाल के बारे में इस तरह से बात नहीं की।

घृणा फैलाने वाला भाषण

■ श्राप तक दिए गए। इसकी अगुआई की प्रज्ञा सिंह ठाकुर ने। 19 अप्रैल को उन्होंने कहा, 'मैंने कहा कि तेरा सर्वनाश होगा और करकरे (पुलिस अधिकारी जिन्हें एक ईमानदार नायक की तरह देखते हैं) आतंकवादियों से लड़ते हुए मारे गए।'

■ भाजपा का पसंदीदा हथियार है मुस्लिम समुदाय के प्रति घृणा, क्योंकि उसे उम्मीद है कि घृणा से भरा भाषण अनिवार्य रूप से दोनों समुदायों में ध्रुवीकरण पैदा करेगा। इस मंशा से दिए गए बयानों पर गौर कीजिए :

■ उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री आदित्यनाथ ने नौ अप्रैल को एलान किया, 'यदि कांग्रेस, सपा और बसपा को अली में विश्वास है, तो हमें भी बजरंगबली पर विश्वास है।'

■ कर्नाटक के पूर्व उप मुख्यमंत्री के एस ईश्वरप्पा ने एक अप्रैल को कहा, 'हम कर्नाटक में मुस्लिमों को टिकट नहीं देंगे, क्योंकि उन्होंने हम पर भरोसा नहीं किया।'

■ अमित शाह ने 11 अप्रैल को भाजपा की मंशा साफ कर दी जब उन्होंने कहा, 'हम बौद्धों, हिंदुओं और सिखों को छोड़कर एक-एक घुसपैठिये को बाहर कर देंगे।'

■ विपक्ष में भी वक्ताओं की कमी नहीं है, लेकिन उनकी ओर से जो कहा गया वह गाली या धमकी के कहीं भी नजदीक नहीं है।

■ अब भी चार चरणों के चुनाव बाकी हैं, जिनमें 19 दिनों तक प्रचार होगा। उम्मीदवारों और प्रचारकों की ओर से ऐसी ही और बातें कही जाएंगी। ऐसे प्रत्येक गैरजिम्मेदाराना बयान से भारत में सभ्य लोकतांत्रिक विमर्श एक-एक कदम नीचे गिरता जाएगा। अंततः खतरे में विमर्श नहीं, बल्कि लोकतंत्र खुद है।

Licensed by The Indian Express Limited

कश्मीर की सांस्कृतिक दुर्दशा पर चुप्पी क्यों

कश्मीर समस्या पर बात करते ही हमारा ध्यान पाकिस्तान की साजिशों की ओर जाता है। लेकिन कश्मीर की शैव संस्कृति को संरक्षित करने से हमें किसने रोका है?

सत्तर साल से हम जिस कश्मीर समस्या को राजनीतिक और सामाजिक स्तर पर सहते आ रहे हैं, उसके कोहरे में दूसरी समस्याएं बिल्कुल अनदेखी रह गई हैं। कश्मीर में एक हजार साल से फैला और जनश्रद्धा का विषय बना एक दर्शन इन्हीं सत्तर साल में पूरी दुनिया में आकर्षण का केंद्र बना है। बौद्ध दर्शन के बाद शायद वह कश्मीर का शैव दर्शन ही है, जिसने देश के बाहर पूरी दुनिया के विद्वानों के बीच अपनी प्रतिष्ठा और उत्सुकता बनाई है। मध्यकाल के आरंभ से भी पहले कश्मीर की घाटियों में पल्लवित इस दर्शन को देश के अन्य सभी दर्शनों में आधुनिक माना गया है। जब मुस्लिम आक्रांता एक के बाद देश पर हमला कर रहे थे, तब कश्मीर के शैव ऋषि पूरी दुनिया में अपने प्रकाशाच्छादित विचारों से आध्यात्मिक उत्सुकता और शांति का मार्ग प्रशस्त कर रहे थे। ऐसे लंबे भयाक्रांत दौर में भी पृथ्वी के इस लौकिक स्वर्ग से शैवऋषियों का संप्रदाय कहीं विस्थापित नहीं हुआ।

गौतम चटर्जी

यह शायद शैव ऋषियों के प्रकाश का आकर्षण ही था कि विद्वानों ने इस ओर ध्यान दिया और यहां के शैव ग्रंथों का संस्कृत से हिंदी और अंग्रेजी में अनुवाद गहन स्तर पर आरंभ किया। पहले तो हमें यही जानकारी नहीं थी कि हमारे देश में शैव दर्शन भी है। 12 वीं सदी में जब हमारी शैव परंपरा के एक ऋषि माधवाचार्य ने महसूस किया कि भारतीय ज्ञान की समस्त विरासत के साथ हमारी ग्रंथ संपदा भी जला दी जाएगी, तो उन्होंने हमारे प्राचीन शीर्षस्थ सोलह ग्रंथों की एक पुस्तक *सर्वदर्शनसंग्रह* नाम से तैयार की और इसकी कुछ प्रतियां बनाकर वृहत्तर भारतवर्ष के ऐसे स्थानों पर सुरक्षित रखवा दिया, जहां वे आततायी आसानी से नहीं पहुंच सकते थे।

19 वीं सदी के मध्य में पंडित ईश्वरचंद्र विद्यासागर महाशय को इस पुस्तक की दो प्रतियां काशी में प्राप्त हुई और उन्होंने इसे संपादित कर कोलकाता की रॉयल एशियाटिक सोसाइटी से प्रकाशित कराया। तब जाकर भारत में प्राचीन ज्ञान की पांडुलिपियों की खोज कर रहे ब्रिटिश विद्वानों के दल को यह जानकारी मिली कि यहां सोलह ऐसे दर्शन की भी प्राचीन परंपरा रही है, जिससे देश की आध्यात्मिक आत्मा का गौरव चिह्नित होता है। विद्यासागर के इस अवदान से अभी देश पूरी तरह परिचित नहीं हुआ है। और फिर उनमें से दो विदेशी विद्वान कॉवेल और गॅफ ने *सर्वदर्शनसंग्रह* के पंद्रह दर्शनों का अंग्रेजी अनुवाद कर उन्हें प्रकाशित किया और पाया कि इनमें जिन शैव दर्शनों का जिक्र है, उनमें एक कश्मीर शैव दर्शन है। वे कश्मीर की तरफ दौड़े और कश्मीरी पंडितों के घर पोथियां छान मारीं। वहां उन्हें जो भी संस्कृत ग्रंथ मिला, उसके अंग्रेजी अनुवाद में वे जुट गए। इसमें भारतीय विद्वान भी आगे आए। तब से भारतीय ज्ञान के इस सर्वाधिक आकर्षक क्षेत्र के अध्ययन और अनुवाद का सिलसिला विशद स्तर पर चलता चला आ रहा है।

अलबत्ता 20 वीं सदी के कुछ महत्वपूर्ण भारतीय विद्वानों ने पाया कि विदेशी विद्वान इस दर्शन का जिस प्रकार से अध्ययन कर रहे हैं, उससे लगता है कि वे भारतीय दर्शन की आत्मा को नहीं पकड़ पा रहे। वर्ष 1937 में पहली बार आचार्य सुनीति कुमार चटर्जी ने इस ओर ध्यान दिलाया कि वेद की व्याख्या विदेशी विद्वान सम्यक ढंग से नहीं कर रहे। ऐसे ही 20 वीं सदी के मध्य में साधक पंडित गोपीनाथ कविराज ने यह देखकर, कि कश्मीरी शैव दर्शन के ग्रंथों का अंग्रेजी अनुवाद विदेशी सही नहीं कर रहे, एक अन्य विद्वान एवं अपने शिष्य ठाकुर जयदेव सिंह से अनुरोध किया कि अनुवाद वह करें। गोपीनाथ कविराज ने ठाकुर साहब के आगे विदेशियों के असंगत अनुवाद का एक उदाहरण भी रखा। कश्मीरी शैव दर्शन का एक प्रमुख ग्रंथ है *शिवसूत्र*। इनमें से एक सूत्र है 'उद्यमो भैरवः।' एक तत्कालीन ब्रिटिश विद्वान ने उद्यम का अंग्रेजी अनुवाद मोनियर विलियम्स का शब्दकोश देखकर जो किया था, वह हिंदी के उद्यम शब्द का अंग्रेजी प्रतिशब्द था। जबकि इस सूत्र में उद्यम एक तकनीकी शब्दावली है, जो कश्मीरी शैव दर्शन की मूल दृष्टि से उपजा है, जिसमें उद्यम का अर्थ होता है प्रज्ञादीप्त मस्तिष्क में प्रकाश का एकाएक कौंधना। कविराज जी की सलाह पर जयदेव सिंह ने शैव दर्शन के पांच प्रमुख ग्रंथों का अनुवाद किया, जो अब भी विद्वत समाज में आधिकारिक और सर्वोत्कृष्ट माना जाता है।

पिछले पच्चीस-तीस साल में एक नई समस्या आई है। सर विलियम जोन्स, एच. एच. विल्सन, मैक्समूलर से लेकर कॉवेल और गॅफ जैसे विद्वानों के अवदान की ओट से दूसरे बेशुमार विदेशी यह कहते हुए देश में सक्रिय हैं कि भारत की ज्ञान संपदा विदेशियों ने ही संरक्षित की, क्योंकि भारतीय ऐसा नहीं कर सकते। यह नई परंपरा कश्मीर की नई समस्या के रूप में देखी जा सकती है, क्योंकि संरक्षण के नाम पर देश से बाहर जा रहे भारतीय ज्ञानग्रंथों में कश्मीर का शैव दर्शन प्रमुख है।

भारतीय अध्यात्म को देश से बाहर ले जाकर बेचा भी जा सकता है, ऐसा न वैदिक ऋषियों ने सोचा होगा, न कश्मीर के शैवऋषियों ने, जिनमें अभिनवगुप्त प्रमुख हैं। अभिनवगुप्त आज भी कश्मीरी पंडितों के लिए प्रातःस्मरणीय हैं, और जिनकी श्रीनगर स्थित समाधि 'भैरव कंदरा' पर अब मुस्लिमों का अधिकार है। कश्मीर समस्या पर बात करते ही हमारा ध्यान पाकिस्तान की साजिशों की ओर जाता है। लेकिन कश्मीर की शैव संस्कृति को संरक्षित करने से हमें किसने रोका है? बीती सदी के आखिरी दशक में कश्मीरी पंडितों को उनके घर से बेघर होना पड़ा। और अब उनकी अध्यात्म संपदा देश से विस्थापित हो रही है। इसके संरक्षण की उम्मीद देश के राजनीतिज्ञों से करें या विद्वानों से?